दलित महिला और समाचार पत्रों का दृष्टिकोण

(विशेष संदर्भ : नसबंदी कांड)

Dalit Women And News Paper Perspectives

(Special Reference : Sterilisations case in bilaspur c.g.)

जनसंचार विषय में एम.फिल. उपाधि के लिए प्रस्तुत

लघु शोध प्रबंध

सत्र- 2014-15

शोधार्थी

प्रिया गुप्ता

पंजी.क्र.- 2014/05/208/016

ज्ञान शांति मैत्री

संचार एवं मीडिया अध्ययन केंद्र

(मानविकी एवं सामाजिक विज्ञान विद्यापीठ)

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997 क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित)

पोस्ट : हिंदी विश्वविद्यालय, गांधी हिल्स, वर्धा – 442005 (महाराष्ट्र) भारत

महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय

(संसद द्वारा पारित अधिनियम 1997 के क्रमांक 3 के अंतर्गत स्थापित केंद्रीय विश्वविद्यालय)

Mahatma Gandhi Antarrashtriya Hindi Vishwavidyalaya

(A Central University Established by Parliament by Act No: 3 of 1997)

घोषणा पत्र

मैं प्रिया गुप्ता घोषणा करती हूँ कि 'दलित महिला और समाचार पत्रों का दृष्टिकोण' (विशेष संदर्भ: नसबंदी कांड) शोध प्रबंध मेरे द्वारा संग्रहित तथ्यों पर आधारित है तथा यह मेरा मौलिक कार्य है। इसे अंशतः या पूर्णतः इस विश्वविद्यालय या किसी अन्य संस्थान में किसी उपाधि हेतु प्रस्तुत नहीं किया गया है । यह शोध कार्य मैंने असिस्टेंट प्रो. डॉ. रेणु सिंह के निर्देशन व मार्गदर्शन में पूरा किया है।

मैं घोषणा करती हूँ कि इस शोध प्रबंध/ लघु शोध प्रबंध को पूरा करने में मैंने विश्वविद्यालय के शोध संबन्धित सभी नियमों का पालन किया है।

स्थान – वर्धा

दिनांक-

भवदीय

प्रिया गुप्ता

2014/05/208/016

आभार

प्रस्तुत शोध प्रबंध कार्य में कई लोगों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। सर्वप्रथम मैं अपने विभागाध्यक्ष संचार एवं मीडिया अध्ययन केंद्र के निदेशक प्रो. अनिल कुमार राय 'अंकित' के प्रति आभार प्रकट करती हूँ जिन्होंने मुझे प्रस्तुत शोध विषय पर कार्य करने की अनुमति प्रदान की। मेरे द्वारा प्रस्तावित इस शोध विषय को उन्होंने सहर्ष सहमति प्रदान की। मेरे द्वारा इस शोध विषय के चयन के पीछे कारण यह है क्योंकि कि दलित महिलाएं हमारे समाज में सबसे पिछड़ी रही है उनके विकास को लेकर मीडिया का दृष्टिकोण और उनके मुद्दे छवियों को अखबार में जगह कम ही मिलती है ऐसा मैंने वर्धा आकर कई किताबों और कुछ पत्रिकाओं में अध्ययन के दौरान महसूस किया। और तभी मैंने इसे अपने शोध का विषय बनाने का निर्णय लिया।

प्रस्तुत शोध प्रबंध आदरणीय असिस्टेंट प्रो.डॉ. रेणु सिंह के कुशल व स्नेहमयी निर्देशन के बिना असंभव था। उनकी खुद की पत्रकारिता के अनुभव का संपुट लेकर मैं अपने शोध प्रबंध पर उत्तरोतर बढ़ती गयी। शोध की पूर्णता के लिए समय-समय पर उनका कुशल मार्गदर्शन भी मुझे मिलता गया। उनके बहुमूल्य सुझाव और सहयोग के लिए मैं फिर से अपने शोध निर्देशक के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ। संचार एवं मीडिया अध्ययन केंद्र के अन्य शिक्षकों की भी मैं आभारी हूं, जिनका सानिध्य मुझे प्राप्त होता रहा। मैं अपनी गुरु पुर्णिमा मैम का आभार ज्ञापित करती हूं जिनका मार्गदर्शन मुझे समय-समय पर मिलता रहा। इसके अलावा उन सभी गुरुजनों के प्रति आभारी हूं जिनका सहयोग मुझे प्रत्यक्ष व परोक्ष रूप में मिलता रहा।

मेरा पूरा शोध दलित महिलाओं के चित्रण में समाचार पत्रों की शैली पर आधारित है, इसलिए महिला रिपोर्टर और अपने अग्रजों के प्रति भी मैं आभार ज्ञापित करती हूं। इसमें चंद्रभान प्रसाद, अनिल

चमड़िया, पुर्णिमा ओरांव, करुणा कृति तथा दैनिक भास्कर अखबार के संपादक और इसके अलावा उन मित्रों की भी आभारी हूं जिनका सहयोग न मिला होता तो प्रस्तुत शोध में तथ्यों की कमी पूरी न हो पाती।

मैं अपने माता-पिता और विशेष तौर पर अपने बड़े भाई मनीष गुप्ता के प्रति भी आभार प्रकट करती हूं, जिन्होंने शोध कार्य के दौरान मुझे पारिवारिक जिम्मेदारियों से मुक्त रखा, क्योंकि इसके अभाव में मैं अपना शोध कार्य तन्मयता से पूरा न कर पाती।

इसके साथ ही मैं सावित्रीबाई फुले महिला छात्रवास के तमाम अग्रज व अनुज साथियों के अलावा अपने कमरे की सहपाठी प्रिया के प्रति भी हार्दिक रूप से आभार व्यक्त करती हूं जिनके द्वारा मानसिक सहयोग मुझे अध्ययन के दौरान मिला।

अनुक्रमणिका

अध्याय क्रम	पेज संख्या
भूमिका	1 - 2
प्रस्तावना	3 – 6
अध्ययन का क्षेत्र	7 – 11
अध्ययन का उद्देश्य	
अध्ययन का महत्व	
शोध की उपकल्पना	
शोध प्रविधि	
तथ्य संकलन के उपकरण	
शोध की सीमाएँ	
अध्याय – 1. दलित की अवधारणात्मक व्याख्या	12-14
1.1 : भारत में जातिवाद	15-19
1.2 : मीडिया और दलित	20-28
1.3 : दलित नारी और मीडिया	29-30
अध्याय – 2.	

१. साहित्य-समीक्षा 31-35

अध्याय – 3. दलित महिलाओं के प्रति भेदभाव

१.१ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक भेदभाव 36-43

१.२ मीडिया की नैतिकता 44-46

अध्याय – 4 . समाचार-पत्रों का संक्षिप्त परिचय 47-52

१.१ : दैनिक भास्कर समाचार-पत्र परिचय

१.२ : हरिभूमि समाचार पत्र परिचय

१.३ : हिंदू समाचार -पत्र परिचय

१.४ : टाइम्स ऑफ इंडिया पत्र परिचय

अध्याय – 5.

१.१ : खबरों का विश्लेषण 53-71

१.२ :आंकड़ों की स्थिति एवं प्रभाव का विश्लेषण 72-93

निष्कर्ष एवं सुझाव 94-100

शोध की सीमाएं 101

संदर्भ ग्रंथ सूची 102 -104

परिशिष्ट 105-120

भूमिका

भूमिका-

मीडिया में महिलाओं का चित्रण हमेशा चिंता का विषय रहा है। चाहे फिर वो खबरों के प्रसारण में हो या अपने कार्यालयों में हो। मीडिया में महिलाओं की समानता और विशेषकर दलित महिलाओं की समानता और प्रतिनिधित्व चिंता का विषय रहा ही है। इस पेपर में दलित महिलाओं के मुद्दे और समाचार पत्रों का दृष्टिकोण छवि निर्माण का अध्ययन किया जाना है अर्थात जब मीडिया दलित महिलाओं से संबंधितमुद्दों को जगह देता है तो वह किस रूप में होती है और उनका महत्तव कितना होता है।

इसमें विशेष संदर्भ के रूप में वर्ष 2014 नवम्बर में छत्तीसगढ़ के बिलासपुर जिले में गांवों की पिछड़ी और विलुप्त होती आदिवासी जातियों की महिलाओं की नसबंदी के लिए जो अमानवीय तरीके अपनाए गए उससे 19 महिलाओं की मौत की खबर आई। देश में जनसंचारके कई माध्यमों ने उस घटना को अपने यहाँ जगह दी। इस खबर के साथ जनसंचार माध्यमों का व्यवहार एक विस्तृत अध्ययन की मांग करता है।

अपनी सीमाओं और संसाधनों के मद्देनजर हमने इस अध्ययन के लिए हिन्दी के 2 समाचार पत्र दैनिक भास्कर, हरिभूमि तथा अँग्रेजी के 2 समाचार पत्र हिन्दू और टाइम्स ऑफ इंडिया का चयन किया गया है। मेरे शोध का निष्कर्ष अंतरवस्तु विश्लेषण पर आधारित होगा। जिसमें गुणात्मक एवं मात्रात्मक दोनों तरीके की विधि शामिल रहेगी। समाचार पत्रों के संकलन में 11 नवम्बर से 30 नवंबर 2014 के राष्ट्रीय समाचार पत्र रहेंगे।

मेरे इस लघु शोध का उद्देश्य मीडिया की भूमिका को नए संदर्भ में परिभाषित करना है दलित स्त्री हिंसा की खबरों के परिप्रेक्ष्य में। इस शोध में एक घटना का संदर्भ लेकर पूरी दलित

महिलाओं की खबरों की कवरेज़ पर बात की गयी है। शोध कार्य द्वारा निश्चित रूप से कुछ नया तलाशने की कोशिश की गयी है, खास कर मीडिया की भूमिका में। हालांकि दलित स्त्री और समाचारपत्रों का दृष्टिकोण के क्षेत्र का दायरा काफी व्यापक है, जिसे इस लघु शोध में समेटना कठिन है। मगर मेरे द्वारा इस विषय को लघु शोध में परिणत करना इस प्रक्रिया में छोटी मगर सकारात्मक हस्तक्षेप जरूर है।

Key words - दलित स्त्री, समाचार पत्र, अंतरवस्तु विश्लेषण छवियां एवं मुद्दे, प्रश्नावली

प्रस्तावना

प्रस्तावना :

वर्ष 2014 के नवंबर के पहले सप्ताह में छत्तीसगढ़ के बिलासपुर जिले में गांवों की पिछड़ी और विलुप्त होती आदिवासी जातियों की महिलाओं की नसबंदी के लिए जो अमानवीय तरीके अपनाए गए उससे 19 महिलाओं की मौत की खबर आई। देश में जनसंचार के कई माध्यमों ने उस घटना को अपने यहाँ जगह दी। इस खबर के साथ जनसंचार माध्यमों का व्यवहार एक विस्तृत अध्ययन की मांग करता है, तथा किसी खबर का महत्व इस रूप में भी देखा जाता है कि उस खबर से जुड़ी सामग्री को देने का सिलसिला कई-कई दिनों तक चलता है, जिसे पत्रकारिता की भाषा में फॉलोअप कहते हैं। यह खबर कई समाचार पत्रों में फॉलोअप के लायक कतई नहीं समझी गई। समाचार पत्रों में खबरों के चयन के कई आधार होते है , क्योंकि यह खबर छत्तीसगढ़ के दलित आदिवासी महिलाओं से जुड़ी थी, इसलिए राष्ट्रीय स्तर के समाचार पत्रों में खबर को ज्यादा महत्व नहीं दिया गया। बिलासपुर से निकलने वाले कुछ समाचार पत्रों ने तो खबर को उठाया परंतु उनमे सामग्री का अभाव रहा।मीडिया में सामाजिक संदर्भ की खबरे कम ही रहती है या होती ही नहीं है। इसे मीडिया के इस सिद्धांत के द्वारा समझा जा सकता है, जिसमे मैकॉम्ब और डोनाल्ड शा के एजेंडा सेटिंग की अवधारणा (१९७२), डीफ्ल्यूर एवं बॉल राकेश के मीडिया सिस्टम डिपेंडेंसी थ्योरी (१९८९), जिसमें यह बताया गया है कि समय के साथ मीडिया की कई चीजें अप्रासंगिक हो जाती है) तथा लेजरफेल्ड की ओपिनियन लीडर की अवधारणा (१९४०. ४४) को आधार बनाकर तैयार की गयी है। यह नवीन सिद्धांत बताता है कि सामाजिक मुद्दों के प्रस्तुति में मीडिया ओपिनियन लीडर की भूमिका में हो जाता है और लोग एजेंडा सेंटर की भूमिका को अपना लेते हैं। मीडिया को ओपिनियन लीडर इसलिए कहा गया है क्योंकि यह खबरों को बाजारी शक्तियों के आधार पर अपने तरीके से अन्य जगह पहुंचाता है।

हम सभी जानते हैं कि भारत की संरचना जातिवादी है और यह जातिवादी फैक्टर हर जगह काम करता है। हमारे समाज की जो संरचना है उसमें पिछड़ों और दलितों (लगभग 80 प्रतिशत) की तादात ज्यादा है । ऊंची जाति (लगभग) 20 प्रतिशत से ताल्लुक रखने वाले लोगों की तुलना में। लेकिन पूरे समाज को नियंत्रितऊंची जाति के लोग करते हैं। जिसमें पिछड़ों और दलितों को इनका अनुकरण करना होता है। समाज में मौजूद यह सामाजिक संरचना लोकतंत्र का चौथा स्तंभ कहे जाने वाली मीडिया में भी मौजूद है अर्थात मीडिया जब ऊंचे तबकों की खबरें प्रसारित करता है । तो वह ऊंचे तबके के पक्ष से ही अपनी बात कहता है। महिलाओं के साथ भी यही स्थिति है, यही वजह है कि न तो महिलाओं की भागेदारी मीडिया में दिखती है और न ही समाज के पिछड़े तबकों की । महिलाओं की भागेदारी भी मीडिया में सिर्फ एंकर के बतौर खूबसूरत माने जाने वाले अर्थात गोरे रंग की लड़कियों की दिखती है महिलाओं की मूल भागेदारी कहीं नहीं दिखाई देती है । उदाहरण न्यूज बोर्ड से संबंधित निर्णय लेने के मामले में निर्णय पुरुष के द्वारा ही होता है। भारत में नारी के लिए "यत्र नार्यन्तू पूज्यंते रमंते तत्र देवता" जैसे वाक्यों का प्रयोग किया जाता है। भारतीय समाज में प्राचीन काल से वर्तमान काल तक महिलाओं को कहीं-कहीं पर उच्च प्रस्थिति प्राप्त हुई किंतु अधिकांशत वे अपमानित, उपेक्षित, शोषित एवं बहिस्कृत होती रही हैं। इसमें भी दलित जाति की महिलाएं तो सर्वाधिक शोषण का शिकार हुई अत: इनकों दोहरी दलित भी कहा जा सकता है दलित महिलाएं जाति, धर्म, लिंग के आधार पर समाज की ज्यादा उपेक्षित स्थिति में है। सिमोन द बुआर का कहना है- कि महिलाएं जनमती नहीं, बल्कि बनाई जाती हैं । अर्थात महिलाओं की संपूर्ण परिस्थिति का पूर्ण जिम्मेदार हमारा समाज है, दुर्खिम के अनुसार व्यक्ति बड़ा नहीं समाज बड़ा है। अर्थात जैसा समाज चाहता है वैसी ही वहां की व्यवस्था होती है तथा हीगल के अनुसार जैसी समाज की सोच होगी वैसा समाज का स्वरूप होगा अर्थात मीडिया भी हमारे इसी समाज का हिस्सा है जहां मीडिया जनमत निर्माण में विचार

बनाने में जागरूकता लाने में अहम रहा है तो आखिर ऐसा क्या रहा है, जिससे मीडिया में भारतीय समाज का एक पूरा तबका खबरों से गायब रहता है। आखिर क्यों दलित महिलाओं के रेप की खबर को इतना फॉलोअप नहीं किया जाता है। जबकि किसी खबर का महत्त्व इस रूप में भी देखा जाता है, कि उस खबर से जुड़ी सामाग्री को देने का सिलसिला कई-कई दिनों तक चलता है, जिसे पत्रकारिता की भाषा में फॉलोअप कहते है। उसी में एक खबर है नसबंदी की जिसे कई राष्ट्रीय अखबारों ने महत्व ही नहीं दिया वही ऐसे केस जो बड़े मीडिया समूह से जुड़ा हो या मसालादार खबर हो जैसे शीना बोरा केस या चाहे राधे माँ का केस हो उसे सभी समाचार पत्रों और टेलीविज़न चैनलों के द्वारा फॉलोअप किया जाता है मेरा यह शोध इसी प्रश्न पर आधारित है, कि आखिर दलित महिलाओं कि खबरों के प्रस्तुतीकरण में राष्ट्रीय स्तर के समाचार- पत्रों का क्या दृष्टिकोण है।

अध्याय – 1. दलित की अवधारणात्मक व्याख्या :

इस अध्याय में दलित की अवधारणा, भारत में जातिवाद, मीडिया और दलित तथा मीडिया और दलित महिलाओं के बारे में बताया गया है। इस अध्याय में दलित शब्द कहाँ से आया मीडिया में दलित संबन्धित खबरे किस तरह की होती है, भारत में जातिवाद को लेकर क्या स्थिति है। दलित महिलाओं का मीडिया विशेषकर समाचार पत्रों में किस तरह की खबर दलित महिला से जुड़ी होती है। इसके बारे में बताया गया है।

अध्याय – 2. साहित्य-समीक्षा

इस अध्याय में अपने शोध विषय से संबन्धित पुस्तकों, विशेष आलेख, रिपोर्ट, शोध लेख आदि की साहित्य समीक्षा की गयी है।

अध्याय – 3. दलित महिलाओं के प्रति भेदभाव तथा मीडिया की नैतिक जिम्मेदारी

अध्याय - 3 में दलित महिलाओं के प्रति सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक भेदभाव के बारे में बताया गया है , इसमें '(एनसीडबल्यू) राष्ट्रीय महिला आयोग' की रिपोर्ट के आधार पर बताया गया है कि दलित महिलाओं के साथ दुर्व्यवहार होने का सबसे बड़ा कारण है उनकी आर्थिक स्थिति का कमजोर होना। लगभग 51 प्रतिशत दलित महिलाएं गांवों में और 56 प्रतिशत शहरों में गरीबी रेखा से नीचे हैं। कई दलित महिलाएं रोजमर्रा की जिंदगी में कमाती है। लेकिन यह सत्य है कि बेरोजगार दलित महिलाओं की तादाद सामान्य महिलाओं के मुक़ाबले ज्यादा है। उनके पास अछूत होने के पैमाने की वजह से कमाई करने का अवसर भी कम हो जाता है। इस अध्याय में मीडिया की क्या नैतिक जिम्मेदारी होनी चाहिए। तथा किस तरह खबरों को प्रस्तुत किया जाना चाहिए उसके बारे में बताया गया है। इसमें जेसिका मर्डर केस को उदाहरण के रूप में शामिल किया गया है।

अध्याय – 4. समाचार-पत्रों का संक्षिप्त परिचय

इस अध्याय में मेरे शोध विषय में शामिल किये गए समाचार पत्रों का संक्षिप्त परिचय दिया गया है, जिसमे चार समाचार पत्र दैनिक भास्कर, हरिभूमि, हिन्दू, टाइम्स ऑफ इंडिया है।

अध्याय – 5. खबरों का विश्लेषण

इस अध्याय में अंतर्वस्तु विश्लेषण के आधार पर खबरों का विश्लेषण तथा प्रश्नावली के आधार पर आंकड़ों की स्थिति एवं प्रभाव का विश्लेषण किया गया है जिसे विभिन्न चार्ट एवं ग्राफ द्वारा बताया गया है।

अंत में निष्कर्ष एवं सुझाव तथा संदर्भ सूची को शामिल किया गया है।

अध्ययन का क्षेत्र

दलित महिलाओं की समस्या और अखबारों की भूमिका को किसी भी भौतिक क्षेत्र में प्रतिबंधित करके नहीं रखा जा सकता, भारत में बहुत से समाचार पत्र-पत्रिकायें प्रकाशित होती है, जिसका पूरा अध्ययन कर पाना असंभव है। शोध की विशालता को देखते हुए इसका शोध क्षेत्र सीमित किया और समाचार पत्रों में दैनिक भास्कर, हरिभूमि का बिलासपुर संस्करण, हिंदू तथा टाइम्स ऑफ इंडिया का दिल्ली संस्करण का अध्ययन किया। दलित महिलाओं से संबन्धित अनेक समस्याएँ भारत के कई राज्यों में व्याप्त है जिसमें से छत्तीसगढ़ भी एक राज्य है अतः इसकी व्यापकता को देखते हुए छत्तीसगढ़ में हुए नसबंदी कांड को विशिष्ट रूप से शामिल किया गया है

इस शोध में दलित महिलाओं के संबंध में अखबारों की भूमिका का एक समयावधि में अध्ययन किया है, जिसमें वर्ष 11/11/2014 – 30/11/2014 तक के 20 दिनों के समाचार पत्रों का चयन किया गया है।

शोध का उद्देश्य-

- ✓ इस शोध का उद्देश्य यह है कि इस महत्वपूर्ण जनसंचार माध्यम ने आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक स्तर पर कमजोर महिलाओं के साथ अमानवीयता की खबरों के साथ कैसा व्यवहार किया।
- ✓ समाचार पत्रों में आने वाली खबरों से समाज में पड़ रहे प्रभाव का अध्ययन करना।
- ✓ दलित महिलाओं के खबरे मुद्दे छवियों की प्रस्तुति का अध्ययन करना।

- ✓ दलित महिला से जुड़े सवालों की ओर लोगों का ध्यान आकर्षित करना।
- ✓ आज के परिप्रेक्ष्य में समाचार पत्रों की भूमिका रेखांकित करना।
- ✓ दलित महिलाओं से जुड़ी खबरों के संदर्भ में राष्ट्रीय स्तर के हिन्दी दैनिक भास्कर, हरिभूमि, अंग्रेजी के हिंदू, तथा टाइम्स ऑफ इंडिया के पत्रों का तुलनात्मक अध्ययन।

अध्ययन का महत्व

मीडिया के अध्ययनरत छात्र/छात्राओं के लिए प्रस्तुत शोध की प्रासंगिकता बढ़ जाती है जब मीडिया में दलित महिलायें जो समाज के कमजोर तबके से होती है उनको लेकर मीडिया के नए दृष्टिकोण का पता चलेगा। दलित से जुड़ी खबरों में मीडिया की संवेदनशीलता को खबरों के माध्यम से जांचा जाएगा। मेरा यह शोध नया है मीडिया में तो यह मुद्दा बना ही परंतु दलित महिलाओं से जुड़ा काम मेरी नजर में नया है जिसे मीडिया के छात्रों को भविष्य में इस पर विचार करने का एक नजरिया प्रस्तुत करेगा।

शोध समस्या

मीडिया में दलित महिलाओं की हिस्सेदारी बहुत ही कम है।

दलित से जुड़ी खबरें समाचार-पत्रों में कम ही है।

शोध के दौरान समाचार-पत्रों के संकलन में कई तरह कि समस्याएँ आयी क्योंकि ज़्यादातर समाचार-पत्रों जैसे- दैनिक भास्कर, हरिभूमि आदि समाचार पत्रों ने अपनी आर्काइव अपडेट कर नहीं रखा है।

शोध उपकल्पना

- दलित महिलाओं की खबरों को प्रमुखता के साथ छापा नहीं जाता है।
- खबरों के कई बार कमजोर फॉलोअप के कारण खबरें मर जाती है।
- सामान्य महिलाओं की प्रस्तुती और दलित महिलाओं की प्रस्तुतीकरण में अंतर होता है।
- खबरों में दलित महिलाओं के मुद्दों अपराध शोषण, पोषण एवं स्वास्थ्य आदि खबरों को मिलने वाली जगह बहुत कम होती है।
- दलित शब्द अगर राजनीति से जुड़ जाता है, तो वह खबर पहले पन्ने पर छपती है जबकि वही दलित शब्द अगर महिला के साथ जुड़ जाता है तो वह महज एक कॉलम में छपकर रह जाता है?

शोध प्रविधि

अंतर्वस्तु विश्लेषण –

द हिन्दू, टाइम्स ऑफ इंडिया, हरिभूमि और दैनिक भास्कर

अंतर्वस्तु विश्लेषण या सामग्री विश्लेषण मीडिया या विषयवस्तु विश्लेषण संचार शोध का एक अत्यंत ही महत्वपूर्ण एवं विशिष्ट पद्धति है। इसे सांकेतिकरण के नाम से भी जाना जाता है। इसके अंतर्गत विभिन्न प्रकार की मीडिया सामग्री का संकलन एवं विश्लेषण किया जाता है। यह गुणात्मक हो सकता है, गणनात्मक भी हो सकता है, सैद्धांतिक हो सकता है और व्यावहारिक भी।

अंतर्वस्तु विश्लेषण का उद्भव द्वितीय विश्व युद्ध के समय हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद अंतर्वस्तु विश्लेषण को एक नया आयाम मिला। परिणामस्वरूप यह पद्धति अधिक लोकप्रिय होने लगी। यह केवल रेडियो पर ही सीमित रही, मीडिया के अन्य क्षेत्रों जैसे – समाचारपत्र, समाचार समिति, पत्रिका, टेलीविज़न, सिनेमा, पाठ्य पुस्तक, कहानी, उपन्यास, विज्ञापन, चुनाव प्रचार, नारेबाजी, भाषण आदि तक होने लगा है। वर्तमान में इस पद्धति का प्रयोग इंटरनेट पत्रकारिता, उपग्रह, पत्रकारिता एवं डी.टी.एच. आदि पर भी किया जाने लगा है।

चार्ल्स आर. राईट ने अपनी पुस्तक 'मास कम्युनिकेशन : ए सोशलाजिकल परस्पेक्टिव' (1986) में अंतर्वस्तु विश्लेषण को इस प्रकार परिभाषित किया है, 'अंतर्वस्तु विश्लेषण क्रमबद्ध वर्गिकरण एवं संचार सामग्री का सामान्य रूप से पूर्व निर्धारित श्रेणियों के अनुसार वर्णन की एक शोध तकनीक है, जिसमें गुणात्मक या गणनात्मक या दोनों प्रकार के विश्लेषण हो सकते हैं।'

साक्षात्कार पद्धति

चंद्रभान प्रसाद, अनिल चमड़िया, करुणा कृति.

कई विषयों में प्रत्यक्ष रूप में प्राथमिक शोध- सामग्री संचित करने के लिए उपयोगी मार्ग है – साक्षात्कार या भेंट। जब अनुसंधान कार्य निर्जीव वस्तुओं तथा लिखित सामग्री से संबन्धित न होकर जनों के विचार, मनोवृति, व्यवहार-प्रत्यक्ष उपाय संबन्धित जनों से मिलकर प्रश्नों द्वारा उनसे अपेक्षित जानकारी प्राप्त करना होता है। समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र, मनोविज्ञान, शिक्षा-विज्ञान, सामाजिक-स्वास्थ्य आदि से संबन्धित अनेक विषयों में शोध के लिए साक्षात्कार द्वारा सामग्री-संकलन किया जाता है। जहाँ पूर्वकृत शोधों से संचित प्राथमिक सामग्री नहीं है, अथवा हो तो भी

अपर्याप्त है, वहाँ साक्षात्कार से ही जीवन संबंधी प्रामाणिक सामग्री प्राप्त की जा सकती है। साक्षात्कार में शोध करनेवाला स्वयं व्यक्तियों से मिलकर सामाग्री जमा करता है।

प्रश्नावली

प्रश्नावली प्रश्नों अथवा कथनों की एक ऐसी लिखित सूची होती है, जिसके प्रश्नों के उत्तर, उत्तरदाता स्वयं लिखता है। इन प्रश्नों को एक पुस्तिका अथवा प्रपत्र के रूप में छपवाया जाता है। ये प्रपत्र या तो डाक द्वारा उत्तरदाताओं को भेजे जाते हैं, जिनके उत्तर लिखकर वे शोधकर्ता को वापस लौटा देते हैं अथवा शोधकर्ता उत्तरदाताओं को अपने सामने बैठाकर उन्हें ये पुस्तिका बाँट देता है तथा उत्तरदाता प्रश्नों को पढ़कर स्वयं उनके उत्तर लिख देते हैं।

यंग (1965) के अनुसार, "प्रश्नावली एक ऐसी प्रपत्र होती है, जिसमें उत्तरदाता स्वयं अपने विषय में लिखकर जानकारी प्रस्तुत करता है तथा जिसका उद्देश्य उत्तरदाता अथवा उसके परिवार एवं परिवार के काम-धंधों के विषय में तथ्य अथवा अभिमत अथवा दोनों की ही जानकारी प्राप्त करना होता है।

तथ्य संकलन के उपकरण

- साक्षात्कार
- अंतर्वस्तु विश्लेषण
- प्रश्नावली

अध्याय 1

दलित की अवधारणात्मक व्याख्या

१.१: भारत में जातिवाद

१.२: मीडिया और दलित

१.३: दलित नारी और मीडिया

अध्याय – 1 : दलित की अवधारणात्मक व्याख्या

अनुसूचित जातियाँ, आदिवासी समाज या अन्य पिछड़ी श्रेणियां हो पहले वह अपना नाम स्वयं नहीं रखते थे. उनके नाम अन्य लोग रखते थे. भारत के विभिन्न राज्यों में उनके भिन्न-भिन्न नाम थे. वह नाम भी बहुत घटिया तथा घृणित होते थे. पंजाब के दोआबा इलाके में अनुसूचित जाति कोई भी हो, दूसरे लोग उन्हें चमार-चूहड़े कह कर पुकारते हैं यह तो केवल पंजाब के अनुसूचित जाति के लोगों की बात है. आदिवासी जो वनों में रहते हैं, जिनकी स्थिति देश में सबसे बुरी है, उन्हें जब लोग पुकारते है तो गोंड-गंवार जैसा घटिया घृणित नाम लेकर पुकारते हैं. गोंड उनके सबसे बड़े कबीले का नाम है इसलिए गोंड के साथ गवार लगाकर पुकारा जाता है, इस प्रकार पिछड़ी जातियों के शूद्र लोगों को भी कई नाम लेकर पुकारा जाता है जैसे तेली-तमोली आदि. जिस तरह दलित अपना नाम स्वयं नहीं रखता था, उसी तरह यह अपनी किस्मत का फैसला भी स्वयं नहीं करता था।

एक वर्ग विशेष जिसे सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक,चारित्रिक और नैतिक दृष्टि से दबाया गया, जिसे कुत्सित किया गया, जिसे सम्पूर्ण विश्व को अपना घर मानने वाले, सम्पूर्ण विश्व में विश्वबंधुत्व की अलख जगाने का दावा करने वाले द्विजवर्गीय पुराधाओं ने समाज की मुख्य धारा से अपने निजी स्वार्थ वश हटाकर दयनीय जीवन व्यतीत करने के लिए मजबूर कर दिया उसे आधुनिक विचारकों ने शूद्र से दलित बना दिया।

पूर्व में दलित की अवधारणा के अंतर्गत वे ही वर्ग आते थे जिन्हें स्मृतिकारों ने शूद्र, अछूत, इत्यादि अलंकारों से अलंकृत किया था, लेकिन आज के राजनीतिज्ञ समाज ने दलित का दायरा बढ़ा कर उसमें अन्य वर्गों को भी समाहित कर दिया है। जिनमें जनजाति और पिछड़ी

जातियां प्रमुख हैं ये बाते अलग है कि ये वर्ग अपना आरक्षण प्राप्त करने के लिए तो दलित कि श्रेणी में खड़े हैं लेकिन सामाजिक दृष्टि से ये वर्ग अपने को कभी भी दलित नहीं समझते हैं। दलितों के साथ वही व्यवहार करते हैं जो एक द्विजवर्गीय व्यक्ति करता है। खैर जो भी हो समाज तो इन लोगों को भी इसी सीमा में बद्ध करता है।

मीडिया का कार्य है दुनिया भर में घटित घटनाओं का संग्रहण कर प्रसारित करना, दुर्लभ जानकारियों को सर्वजन सुलभ कराना एवं समाज को विश्वव्यापी मुख्य धारा से जोड़ना। दलित वर्ग में महिलाएं भारतीय समाज का अभिन्न अंग है, इसलिए दलित वर्ग भी उन घटित होने वाली घटनाओं से संबंध रहता है इसमें कोई दो राय नहीं है। दलित का संबंध मीडिया से उसके उदयकल से ही रहा है। साहित्य जगत में प्रसिद्ध है कि प्रत्येक तथ्य के दो पक्ष होते हैं, एक सकारात्मक पक्ष और एक उसका नकारात्मक पक्ष। अब प्रश्न उठता है कि मीडिया किसी तथ्य के किस पक्ष का प्रतिनिधित्व करता है, उम्मीद तो यही कि जाती है कि सकारात्मक पक्ष का ही प्रतिनिधित्व करे लेकिन यह संभव नहीं है इसलिए कहा जा सकता है कि मीडिया तथ्य के दोनों रूपों का पक्षधर हैं जब मीडिया दोनों पक्षों का प्रतिनिधित्व करता है तो यह सवाल जहन में आना स्वाभाविक है कि कहीं मीडिया पक्षपात तो नहीं करता है, किसी तथ्य के साथ पूर्वाग्रह से ग्रस्त होकर खिलवाड़ तो नहीं करता है। क्योंकि दलित भारतीय समाज में पतित माने जाते हैं तो यह शंका अवश्य रहती है कि क्या सवर्ण प्रधान मीडिया इस वर्ग विशेष के साथ निष्पक्ष व्यवहार करती है?

प्रसिद्ध है, कि साहित्य समाज का दर्पण होता है। अतः वर्तमान परिप्रेक्ष्य में यह कहा जा सकता हैं, कि मीडिया भी समाज का दर्पण होता है। जो समाज में घटित होता है वह मीडिया रूपी दर्पण में प्रतिबिम्बित होता है। कहा जाता है कि जिस प्रकार का दर्पण होगा, प्रतिबिंब भी

उसी प्रकार का दिखाई देगा। यदि दर्पण दोषयुक्त है तो प्रतिबिंब भी दोषयुक्त ही दिखाई देगा। इसलिए देखना यह है कि यह मीडिया रूपी दर्पण कैसा है स्वच्छ है या नहीं। अतः इस दर्पण को हम दलित के परिप्रेक्ष्य में देखने का प्रयास कर रहे है।

१.१ : भारत में जातिवाद

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में ब्रिटिश प्रशासकों ने शूद्र जतियों के लिए पिछड़े वर्ग शब्द का प्रयोग करना शुरू किया। भारतीय संविधान का अनुच्छेद16(4) नागरिकों के किसी पिछड़े वर्ग के लिए सरकारी नौकरियों और शिक्षा में आरक्षण का प्रावधान करता है। **इन्दिरा साहनी बनाम भारतीय संघ (1993)**, मुकदमें में बहुमत के निर्णय में सर्वोच्च न्यायालय ने यह विचार व्यक्त किया कि "हमारे विचार में, अनुच्छेद-16(4) में प्रयुक्त शब्द- 'वर्ग' सामाजिक वर्ग के अर्थ में प्रयुक्त किया गया है, न कि उस अर्थ में, जैसा कि मार्क्सवादी अवधारणा के अंतर्गत इसे समझा जाता है।"

स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद भारत सरकार द्वारा पिछड़े वर्गों के लिए आरक्षण की संभावनाओं को तलाशने के लिए गठित पिछड़ा वर्ग आयोगों ने 'पिछड़ा वर्ग' "शब्द का प्रयोग उन जतियों के लिए किया, जो कर्म कांड और व्यवसाय के स्तर पर अछूतों के ऊपर हों, किन्तु पारंपरिक समाज की जाति व्यवस्था के निम्न स्तर पर हों। इस प्रकार, अन्य पिछड़े वर्गों के अंतर्गत वे जातियाँ आती हैं, जो मध्यमवर्ती जातियाँ हैं। ये जातियाँ कर्मकांडीय ढांचे में ब्राह्मण और क्षत्रियों के नीचे तथा अछूतों से ऊपर हैं। ऊंची जातियों के मुक़ाबले कर्मकांड में इनकी स्थिति निम्नस्तर अवश्य थी, लेकिन इनकी तुलना दलितों से नहीं की जा सकती। इसका कारण यह है कि अक्सर इनके पास कुछ जमीन और दूसरे आर्थिक स्रोत रहे हैं। इन्हें अस्पृश्यता का सामना भी नहीं करना पड़ता है।

जाति और इसके उप-विभाजन के लिए 'कास्ट' एक पुर्तगाली शब्द है, शुरुआती दौर के आर्य कबीलों को मोटा-मोती रूप से समतवादी मान सकते हैं। इन कबीले के भीतर निश्चित रूप से

संघर्ष होते रहते थे और बिना जाति के आधार के कुछ को उच्चता व कुछ को निम्नता प्राप्त होती थी। परिवार एवं समाज रूपी गाड़ी को चलाने के लिए स्त्री व पुरुष रूपी दो पहियों का निरंतर सहयोग अति आवश्यक है। नारी मानव समाज की महत्वपूर्ण घटक है। वह दोहरी भूमिका का भी निर्वाह करती है । भारतवर्ष में विभिन्न जातियाँ निवास करती है, जिन्हें दो भागों में बांटा जा सकता है- सवर्ण और सवर्णोत्तर। सवर्णों के अंतर्गत ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आते है और सवर्णोत्तर के अंतर्गत 450 से भी अधिक उपजातियाँ आती है।

जाति के विविध आयाम

भारत में जाति-व्यवस्था के रूप में सामाजिक स्तरीकरण दुनिया कि सबसे जटिल और अनूठी व्यवस्था का अस्तित्व हजारों सालों से है। चाहे हिन्दू हो या गैर-हिन्दू सभी भर्तियों को जन्म से ही एक जाति मिल जाती है, यह जाति सामाजिक अंतःक्रिया या व्यवहार के लिए उनकी पहचान बन जाती है। लेकिन हिंदुओं और गैर-हिंदुओं के लिए जाति का मतलब एक जैसा नहीं है। गैर-हिंदुओं के लिए जाति धार्मिक बाध्यता के रूप में नहीं होती है, यह केवल उस समाज में उनके स्तर को बताती है, जिसके वे भाग होते हैं। सामान्य तौर पर हिंदुओं में यह विश्वास पूर्व जन्म के कर्मों कि सजा या इनाम है।

यह सत्य है कि आदिकाल में शूद्रों का भारत में शासन था। बाद में शूद्र लोग गरीब, भूमिहीन तथा अशिक्षित हो गए या यों कहें कि कर दिये गए ? जिन भाई व बहनों ने निस्वार्थ भावना से परोपकार का कार्य किया, उन लोगों को अपने बराबर चलने का अधिकार तक नहीं था। स्पर्श करना तो दूर, छाया मात्र से दूषित हो जाते थे । अतः इनको बस्तियों से दूर रखा जाता था ।

साधारण रूप से अनुसूचित जाति का ताप्तर्य है – अस्पृश्य। अर्थात ब्राह्मणी शास्त्रों के अनुसार जिनका स्पर्श करना वर्जित है या जिनको स्पर्श करने से दूसरों की पवित्रता नष्ट हो जाए, इनको अछूत भी कहा जाता है। वस्तुतः अछूत शब्द "अस्पृश्य" का ही समानार्थी है।

सर्वप्रथम गार्सिया डी. हार्डी ने सन 1563 में जाति (caste) शब्द का प्रयोग किया। जैसे कोई पुत्र अपने पिता, परिवार के व्यवसाय को अपना लेता है और उसे नहीं छोड़ता। भारत में चमार-जाति के लोग एक समान होते हैं। अतः इस वर्ग को जाति के रूप में माना जाता है। प्राचीनकल में दलित जातियाँ भारत की शासक रही है। आधुनिक एतिहासिक प्रमाणों से ज्ञात होता है कि दलित, अहिरवार, गुजर, महार, पाग, आदि लड़ाकू जातियाँ रही है जो संभवतः ईसा कि चौथी-पाँचवी शताब्दी में अपनी पराजय के बाद बिखर गई।

अछूतपन कब अस्तित्व में आया ?

अनुसूचित जतियों के संबंध में बाबा साहब डॉ बी.आर अंबेडकर द्वारा 1948 में अछूतपन की उत्पत्ति का कारण 'अछूत कौन और कैसे' नामक पुस्तक में प्रस्तुत किया गया। अछूतपन की उत्पत्ति के समय को निर्धारित करने की दृष्टि से देखा जाए, तो पता चलता है कि सन् 200 ईसवी तक भारत में अछूतपन का अस्तित्व नहीं था। क्योंकि मनुस्मृति सन् 185 ईसवी के आस-पास अस्तित्व में आई तथा मनुस्मृति में न तो गौ मांसाहार को निषेध किया गया है और ना गौ-वध को अपराध ठहराया गया है। परंतु अंत्यज एवं चांडाल अवश्य ही अस्तित्व में थे, ये अपवित्र माने जाते थे और कालांतर में ये ही अंत्यज कहलाए। फाहियान (सन् 400 ईसवी) ने अपनी भारत यात्रा के वर्णन में लिखा है कि चांडालों को कुपुरुष कहा जाता है वे दूसरों से पृथक रहते हैं। यदि वे बस्ती या बाज़ार में प्रवेश करते हैं, तो वे अपने आपको पृथक करने के लिए

लकड़ी के टुकड़े से एक प्रकार कि ध्वनि करते हैं, जिससे कि सामान्य आदमियों को उनके आगमन का पता लग जाए तथा वे उनसे बचकर निकाल सकें।

चौथी ईसवी में किस समय अछूतपन पैदा हुआ? इस प्रसंग में ज्ञातव्य है कि गुप्त राजाओं द्वारा गौ-वध को प्राण दंडनीय अपराध घोषित कर दिया गया, जिससे बौद्ध धर्म एवं ब्राह्मण धर्म में संघर्ष हुआ। इस संघर्ष में अछूतपन कि बुनियाद पड़ी, जिससे भारत का इतिहास पूरी तरह बदल गया। फाहियान द्वारा भारत भ्रमण कि रिपोर्ट में किए गए वर्णन से ज्ञात होता है कि सन् 700 ईसवी तक अछूतपन अस्तित्व में आ गया था और गौ-मांस भक्षण ही इसका मुख्य कारण था।

जाति प्रथा को ब्राह्मणों ने बढ़ा-चढ़ाकर पेश करके समाज संतान मानने लगे तथा धार्मिक क्रियाएँ और मान्यताएं एक जैसी स्थापित हो गईं। इस प्रकार के प्रचलन को भारत के अन्य वर्गों ने भी मानना शुरू किया और जाति-उपजाति का नाम के साथ प्रयोग शुरू हुआ, जो अब तक भी पंजाब, हरियाणा, हिमाचल, महाराष्ट्र, छत्तीसगढ़ के साथ सभी दक्षिणी राज्यों में आम नागरिक अपने नाम के साथ पिता तथा जन्म स्थान, गाँव-शहर का उल्लेख करते हैं। कालांतर में यह एक प्रथा बन चुकी है?

ब्राह्मणों ने दलितों कि जो दुर्दशा की, उसके वर्णन से तो प्रतिशोध की ज्वाला जागृत होती है। भारत का सारा दलित समाज पंगु बना दिया गया था। डॉ. नवलवियोगी ने अपनी पुस्तक 'सामाजिक क्रांति, क्यों और कैसे?' में लिखा है, कि दक्षिण भारत में जातिभेद का भयंकर बोलबाला था। अतः बढ़ई, लुहार 16 हाथ, ताड़ी बनाने वाला 14 हाथ, चेकवा कृषक 32 हाथ, पारिया 40 हाथ के अंदर आ जाए, तो ब्राह्मण आदि उच्च जाति के लोग अपवित्र हो जाते थे और यदि किसी जलाशय के नजदीक से गुजर जाएं तो जलाशय भी अपवित्र माना जाता था। ममापि जाति का व्यक्ति 200 हाथ की दूरी पर आ जाए, तो सभी अपवित्र हो जाते थे। गाँवों में

अस्पृश्य जाति के लोग सवर्ण हिंदू के बराबर नहीं चल सकते थे तथा ब्राह्मण के अतिरिक्त अन्य जाति की स्त्रियाँ अपनी नाभि से ऊपर के अंग वस्त्रों से नहीं ढक सकती थीं।

ब्राह्मण सन 1817 ईसवी तक हर प्रकार के दंड से मुक्त था। सर्वत्र दलित ही दंडित होते थे। अंग्रेजों द्वारा बनाए गए कानूनों के द्वारा दलितों ने चैन की सांस ली थी। सन् 1947 में सविधान सभा में बाबा साहेब डॉ. बी.आर अंबेडकर ने एक स्मृतिपत्र प्रस्तुत किया था, जिसमें अछूतों के लिए सुरक्षित सीटों वाले क्षेत्र में पृथक चुनाव के अधिकार की मांग की गई। सरदार पटेल के प्रस्ताव पर अस्पृश्यता निवारक कानून 29.4.1948 को पास तो हो गया, लेकिन प्रभावी होने में लगभग 29 वर्ष लग गए, जो कहीं जाकर 29.4.1977 में प्रभावी हुआ। उसमें प्रावधान है कि अस्पृश्यता के कारण किसी को अयोग्य ठहराना अपराध माना जाएगा। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 341 में तथा 342 में इसका विस्तार से वर्णन किया गया है।

१.२ : मीडिया और दलित

दलित आईने में भारतीय लोकतंत्र के तीनों स्तंभों-व्यवस्थापिका, कार्यपालिका व न्यायपालिका की तरह इसके चौथे स्तंभ मीडिया की छवि भी देश के सुविधा संपन्न व यथास्थितिवादियों के हितों के पोषित करने वाली नज़र आती है। प्रिंट व इलैक्ट्रानिक मीडिया की सारी गतिविधियों का इनके चारों ओर केन्द्रित रहना यह सोचने पर विवश करता है कि मीडिया भी अपने हित इन्हीं के हितों में सुरक्षित समझता है।

ऐसा नहीं है कि दलितों ने पत्रकारिता नहीं की। या उन्हें पत्रकारिता करना आता नहीं। बल्कि दलित पत्रकारिता का एक इतिहास भी है जो अनवरत आज भी जारी है। ज्योतिबा फुले ने सन् 1868 में सत्यशोधक 'समाज' की स्थापना की सत्यशोधक दलितों के लिए एक नया आगाज किया और ब्राह्मण के वर्चस्व को समाप्त करने का भरपूर प्रयास किया। इससे प्रभावित हो अन्य ब्राह्मणेतर लोगों ने भी समाचार पत्र का सम्पादन शुरू किया। सन् 1871 में बालचन्द्र कोठारी ने 'जागरूक' 25 अक्टूबर 1917 में 'विजयी मराठा' आदि पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हुई। ये सभी पत्रिकाएँ महाराष्ट्र में दलित चेतना को विकसित करने की दिशा में मील का पत्थर साबित हुई।

मीडिया का यहां अर्थ वर्चस्ववादी ढांचे के लिए निर्मित संवाद और सम्प्रेषण ले माध्यम से है। भारतीय समाज में इसी रूप में सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और सांस्कृतिक हितों की सुरक्षा और वुकस के लिए मीडिया का पूरा ढांचा विकसित किया गया है। वर्चस्व ही मुख्यधारा है। "भारतीय समाचार समितियों, अखबारों और कुल पत्रकारिता की दुनिया मुट्ठीभर प्रभावशाली लोगों को रोज सवेरे यह मौका देने के लिए बनी है कि वे अपने-अपने दोस्तों और दुश्मनों के

समीकरणों की ताजा हालत अखबारों में देख लें। मगर अखबारों की आदत बदलते-बदलते बदलेगी और आशा करनी चाहिए संवाददाताओं की भी।

1780 में जेम्स ए हिक्की के 'बंगाल गज़ट' से मीडिया उद्योग का औपचारिक ढांचा विकसित होना शुरू हुआ। इसकी पृष्ठभूमि में भारत के बड़े भगौलिक क्षेत्र में वर्ण व्यवस्थ रही है। उसका एक आर्थिक, सामाजिक, सांस्कृतिक आधार रहा है। कोई भी व्यवस्था अपना एक संचार, संवाद और सम्प्रेषण का ढांचा विकसित करती है संप्रेषण के ढांचे की एक भाषा उसकी एक प्रस्तुति होती है। उसके अंदर बहने वाले अर्थ उस वर्ग के लिए सहजता से संप्रेषितहो जाते हैं। भारतीय समाज में जतियों के बीच संप्रेषण के लिए जो भाषा और प्रस्तुति विकसित की गई वह मूल रूप में अभी बनी भी बनी हुई है। 'संवाद कौमदी' ने एक अपील छपी जिसमे हिंदुओं से कहा गया की वे अपने जातीय पूर्वाग्रह को भूलकर विभिन्न तरह के मैकेनिक का कम सीखें। उसके संवाददाता ने हिंदुओं को सलाह दी कि ये नहीं सोचें कि यदि वे तकनीशियन हो जायेंगे तो उनका सामाजिक दर्जा छोटा हो जाएगा। 'संवाद कौमदी' ने सम्मानित हिंदुओं को व्यापारी भी बनने पर ज़ोर दिया। साप्ताहिक 'संवाद कौमदी'का प्रकाशन 4 दिसंबर 1821 से 26 फरवरी 1822 तक हुआ। भवानीचरण बंदोपाध्याय उसके प्रकाशक थे। उस समय हिन्दू के रूप में उच्च जातियों बीच सम्बोधन की एक भाषा विकसित हुई। जरूरी भी था कि सम्प्रेषण करने वाले स्वाभाविक और सहजता से इस तरह के सम्बोधन करते हों। ब्रिटिश सम्राज्यकाल में भारतीय समाज में वर्चस्ववादी समूहों ने सम्प्रेषण के ढांचे विकसित करने कि शुरुआत के साथ इस बात का पूरा ध्यान रखा।

शुरुआती दिनों से ही संप्रेषण माध्यमों में कई तरह की धाराएँ दिखती हैं लेकिन मूल रूप में अलग नहीं हैं। 'संवाद भास्कर' प्रगतिशील धारा का पत्र था। उस पत्र ने एक नई तरह की

सामाजिक समस्या की तरफ ध्यान खींचा। "अँग्रेजी शिक्षा की वजह से नई तरह की यह सामाजिक समस्या बन रही है कि नीचे कि जातियों में अँग्रेजी सीखने कि ललक बढ़ रही है और बढई, नाई , धोबी, भंगी जाति के परिवारों के लड़के अँग्रेजी सीखकर क्लर्क, बिल सरकार, एजेंट आदि पदों पर नौकरियाँ पा रहे हैं। वे अपना पारिवारिक काम छोड़ रहे हैं और इससे एक नई सामाजिक समस्या पैदा हो रही है।" बंगाल में संचार माध्यमों के जरिये संप्रेषण का जो ढांचा विकसित हुआ है उसे लेकर कई स्तरों पर शोध हुए हैं, लेकिन जातीय पूर्वाग्रहों और जातिवाद से जुड़े हितों कि सुरक्षा के लिए संप्रेषण के एक ढांचे के रूप मेंमीडिया के विकास पर आधारित शोध नहीं हुए हैं । (शोध भी संप्रेषण के पूरे ढांचे का एक महत्वपूर्ण अकादमिक हिस्सा ही है) जो सुधार और प्रगतिशीलता का सबसे ऊंचे दर्जे का शब्द है 'सहानुभूति और दया'। वह भी अपने हितों की कीमत पर नहीं । हितों को सुरक्षित रखते हुए ।मीडिया में उस प्रगतिशीलता का दिलचस्प नजरिया अब भी देखने को मिलता है । आदिवासियों के संथाल विद्रोह के मौके पर 'संवाद भास्कर' ने विद्रोहियों के खिलाफ सरकार की कार्रवाइयों का समर्थन किया और समाचार पत्र ने संथालों की मांगों के प्रति सहानुभूति होने का संकेत दिया और सरकारी सेना और विद्रोहियों के इलाके वीरभूमि से आए एक पत्र को भी छापा जिसमें स्थानीय मजिस्ट्रेट के नेतृत्व में हुई अत्याचार की घटनाओं का जिक्र था, ;एकिन इसके साथ ही पत्र में यह भी उल्लेख है कि यदि उच्च वर्ण का मजिस्ट्रेट होता तो ये अत्याचार नहीं होते । 2011 तक के मीडिया कि आदिवासी इलाके कि घटनाओं में भूमिका के आधार पर कहा जा सकता है कि कैसे संथाल विद्रोह के दौरान संप्रेषण का जो ढांचा खड़ा हुआ वह अब तक आदिवासियों को छोड़कर सबके हिट पूरे करता रहा है। जब कभी वंचितों कि हिस्सेदारी के क्षण आते हैं तो मीडिया सहानुभूति और प्रगतिशीलता की परिभाषा भूल जाता है। ऐसे ही मुख्यधारा के संचार माध्यमों का ढांचा विकसित किया गया है ।

1878 में अँग्रेजी के लोकप्रिय समाचार पत्र 'द हिन्दू' का प्रकाशन एक रुपया बारह आने का कर्ज लेकर शुरू किया गया था। साप्ताहिक के रूप में 'द हिन्दू' आठ पेज में निकलता था और चार आने में बेचा जाता था। तब मात्र अस्सी प्रतियाँ बिकती थी। इसी वर्ष 75 हजार रुपये में कस्तूरी अयंगारने 'द हिन्दू' को खरीद लिया और अब यह अखबार बड़े मीडिया संस्थान के रूप में सामने है। लेकिन अक्टूबर 1893 में रेत्तमलई श्रीनिवासन ने 'परायण' मासिक पत्रिका निकली। चार पेज की इस पत्रिका के छपने व विज्ञापन के मद में दस रुपये खर्च किए गए थे। इसकी चार सौ कपियाँ दो दिनों में ही बिक गई। उस समय केवल मद्रास नगरपालिका क्षेत्र में 112 उम्मीदवार ऐसे थे जो द्विभाषी पद के योगी पाये गए थे। इससे दलित समाज में पढे लिखे और नौकरी पेशा की स्थिति का अंदाजा लगाया जा सकता है। यह 1900 तक ही नियमित निकला। इसे बंद कर देना पड़ा। आखिर 'द हिन्दू' को खरीदने और चलाने वाले लोग मिल जाते हैं लेकिन रत्तामलई की पत्रिका के लिए कोई ग्राहक व संचालक क्यों नहीं मिल सका?कोई मीडिया संस्थानकेवल एक मालिक की पूंजी से विकसित नहीं होता है, उसे एक ढांचा विकसित करता है जिसमें वर्चस्ववादी समूहों के राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक हितों ने संप्रेषण का एक व्यवस्थित ढांचा विकसित कर लिया है। यह संसदीय लोकतंत्र के मुख्यधारा के मीडिया के भीतर कायम है। मीडिया पर 8 प्रतिशत सवर्ण पुरुषों का मीडिया के भीतर फैसले लेने वाले पदों के 86 प्रतिशत हिस्से पर कब्जा बना हुआ है। (8) भारतीय लोकतान्त्रिक गणराज्य में जिन्हें मुख्यधारा का मीडिया कहा जाता है, उसमें स्थिति यह है कि समाज में हाशिये पर माने जाने वाले किसी भी वर्ग मसलन महिला, पिछड़े, दलित, आदिवासी, अल्पसंख्यक का प्रतिनिधित्व एक नुनतम स्टार पर है या नहीं के बराबर है।

गोपाल बाबा बलंगकर आजादी से पूर्व के प्रथम दलित पत्रकार थे। उनका जन्म कोंकण में महाड़ जिले के रावदक गाँव में महार जाति में हुआ था। ये ब्रिटिश सेना में नौकरी करते हुए सन् 1886 में सेवानिवृत हुए थे। सेवानिवृति के पश्चात वे अस्पृष्योद्धार के लिए संघर्ष करते रहे। इनके अधिकांश लेख 'दीन बंधु', दीनमित्र, आदि पत्रों में छापते रहे। इस जुझारू, कर्मठ एवं निर्भीक दलित पत्रकारिता का निधन 1904 में हुआ।

शिवराम जानबा कांबले परतंत्र भारत के प्रथम दलित पत्रकार थे। इनका जन्म सन्1875 में पुणे में एक महार परिवार में हुआ था। इन्होंने 1903 में 'श्रीशंकर प्रसादिक सोमवंशीय हित चिंतक मित्रसमाज' नामक संस्था की स्थापना की। यह संस्था दलितों को सामजिक चेतना उत्पन्न कर उनके अधिकारों व कर्तव्यों को बताती थी। विषम परिस्थितियों में भी कांबलेजी ने 'सोमवंशीय मित्र' पत्र निकाला। यह मराठी पत्र था जो दलित चेतना का सजग प्रहरी था। जिससे दलितों ने पत्रकारिता करनी सीखी।

किसन फागुजी बसोड़ का जन्म 18 फरवरी, 1875 को नागपुर के एक महार (दलित) परिवार में हुआ। इन्होंने 1903 में 'सन्मार्ग निराश्रित हिन्द नागरिक', 1913 में 'विटसलविध्वंसक, 1918 में 'मजूर पत्रिका' नामक समाचार-पत्र निकले, जो आर्थिक कठिनाइयों के कारण अंत में बंद हो गए। लेकिन वे 'सुबोध पत्रिका', 'केसरी', 'मुम्बई वैभव' 'ज्ञानप्रकाश' आदि पत्र-पत्रिकाओं में अपने लेख लिखते रहे। इन्होंने दलितों पर हो रहे अत्याचारों के विरुद्ध अपनी लेखनी चलाई।

डॉ. अंबेडकर भी पत्रकारिता के माध्यम से दलित चेतना को आगे बढ़ाते रहे। उन्होंने 'मूकनायक', 1920, 'बहिष्कृत भारत' 1927, 'समता' 1930, 'जनता' एवं 'प्रबुद्ध भारत' 1956 में समाचार पत्र प्रकाशित कर दलितों में जागृति पैदा करने का कम किया।

डॉ.अंबेडकर के परिनिर्वाण के लगभग 12 वर्षों के बाद यानि सन 1968 में 'औरंगाबाद' (महाराष्ट्र) से अस्मितादर्श त्रैमासिक साहित्यिक पत्रिका का प्रकाशन हुआ। जो एक महत्वपूर्ण पत्रिका थी। जिसने दलित अस्मिता के प्रश्नो को बखूबी उठाया।

उ.प्र. से करीब 60 पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं, किन्तु अधिकांश दलित पत्र असमय ही बंद हो गए हैं, जैसे रमेश प्रभाकर के सम्पादन में 'मूकभारत' 1978 में प्रकाशित हुआ और एक वर्ष बाद बंद भी हो गया। मोतिरम शास्त्री का 'दलित चेतना' लखनऊ से, रामस्वरुप वर्मा का 'अर्जक' बनारस से, 'रविदास' कानपुर से, आर कमल का 'निर्णायक भीम' इलाहाबाद से, बद्रीप्रसाद बाल्मीकानंद का 'बाल्मीकि प्रकाश' तथा वीमल कीर्ति का दलित साहित्य पर केन्द्रित 'अगंतुर' प्रमुख है।

वर्तमान समय में निम्नलिखित पत्रिकाएँ निकल रही है।

1. हाशिए की आवाज - भारतीय सामाजिक संस्थान (संपादक कमलकान्त)
2. हिमायती - भारतीय दलित साहित्य अकादमी (संपादक – सुमनाक्षर)
3. नागमय संस्कृति - उज्जैन
4. अभिमूक नायक - अशोक भारती
5. शंबूक - रवीन्द्र प्रसाद

6. बहुजनों का बहुजन भारत - बामसेफ

7. बहुजन संगठन अब माया - पहले कांशीराम अब मायावती

8. फॉरवर्ड प्रेस - आयवन कोस्का

इत्यादि ऐसे तमाम दलित पत्र-पत्रिकाएँ है जो दलित लेखन एवं दलित-विमर्श के सरोकार से रु-ब-रु करती हैं।

परंतु स्वतन्त्रता के साठ वर्षों के पश्चात भी दलित डॉक्टर, वैज्ञानिक, शिक्षाविद न्यायधीश, राष्ट्रपति, आई.ए.एस., आई.पी.एस. हो सकते हैं लेकिन मीडिया में आज भी उनकी उपस्थिती नगण्य है इसका क्या कारण है? दलितों की योग्यता पर संदेह किया जा सकता है पर दलितों की योग्यता पर संदेह करना व्यर्थ है। इस कारण जातिवाद के साथ दलितों की ;लापरवाही भी है। अभी तक दलितों को लोग पचा नहीं पाये हैं। अगर सवर्णों का बस चले तो वे दलितों को कहीं ना आने दे। आज का दलित जागरूक है लेकिन उसमें लड़ने के साहस का अभाव है। आज दलित आंदोलन की दिशा भ्रामक हो गई। दलितों में भी वर्ग बन गए हैं अधिकांश दलित आज भी झाड़ू लगा रहे हैं और मैला ढो रहे हैं।

दलितों को राष्ट्रीय मीडिया में स्थान ना देना यह गहरा षड्यंत्र है। यदि दलित मीडिया में आ गए तो दलितों के शोषण का समाचार सबके सामने आ जाएगा। निजी चैनलों की तो बात ही छोड़िए। रेडियो व टी.वी. का दलित ही सबसे बड़ा उपभोक्ता है। हर साल मीडिया संस्थानों से दलित प्रतियोगी बाहर निकलते हैं लेकिन व्यावहारिक रूप में लगता है कि यह खेल चुपचाप चल रहा है। जातिसूचक नामों के द्वारा षड्यंत्र करना सरल हो जाता है। आखिर इसका कारण क्याहै? आज मीडिया का युग है दलितों के साथ इस प्रकार का अन्याय हो रहा है मीडिया का नेतृत्व भी

सवर्णोंके हाथ में है इसलिए वे दलित मीडिया को स्वीकार नहीं कर पाए है। उनकी दृस्टी में दलितों का महत्व झाड़ू लगाने व मैला ढोने से अधिक नहीं है। आवश्यकता इस बात की है कि मीडिया के संदर्भ में दलितों को आंदोलन का रवैया अपनाना चाहिए। सड़कों पर आए बगैर दलितों को न्याय नहीं मिल पाएगा।

दलितों के लिए निजी चैनल स्थापित करने के लिए दलित नेताओं को आगे आना चाहिए। यदि दलित का निजी चैनल स्थापित हो जाता है तो दलितों से संबन्धित समाचार प्रकाश में आएंगे।

दलितों के लिए निजी चैनल स्थापित करने में सरकार कि महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है अभी हाल ही में सरकार 24 घंटे का उर्दू चैनल आरंभ किया है24 घंटे का दलित चैनल क्यो नहीं आरंभ किया जा सकता। ये उपाय ही दलितों को मीडिया में ला सकते हैं। लेकिन दलितों के प्रति घृणा कि मानसिकता अभी तक बनी हुई है।

प्रतियोगिता के इस युग में दलितों को यदि आगे आना है तो कुर्बानी का जज्बा पैदा करना ही होगा। पहले दलितों की सफाई कर्मचारी के रूप में नौकरी मिल जाती थी परंतु अब इसमे भी ठेकेदार प्रथा लागू कर दी गई। मीड्या ने इस सवाल को नहीं उठाया। यदि मीडिया में दलित होते तो यह सवाल उठना सरल हो जाता। अपनी समस्याओं पर दलितों को खुद ही बोलना होगा। ठेकेदारी के आधार पर दलितों को निजी क्षेत्र व मीडिया में रखा जा सकता है परंतु ऐसा नहीं हो रहा है।

विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका में दलितों की उपस्थिती दर्ज है लोकतन्त्र के चौथे स्तम्भ मीडिया में उनकी उपस्थिती दर्ज नहीं हो पाई है इसका निजी खबरिया चैनल पूरी तरह से व्यावसायिक है दलितों को धंधेबाजी का तर्क समझ में नहीं आ रहा है। आंदोलन निजी चैनलों

की स्थापना, दलित नेताओं का सहयोग, आदर्शों की छाया, दलितों को मीडिया में ल सकते है। मुसलमानों, महिलाओं, आदिवासियों की उपस्थिती मीडिया में नगण्य है। 49 फीसदी ब्राह्मण मीडिया में कार्यरत है । ब्राह्मण की आबादी 16% है, लेकिन मीडिया में उनकी उच्च पदों पर सहभागिता 86% है। इस प्रकार की स्थिति में दलितों, आदिवासियों, पिछड़े वर्गों और मुसलमानों को मीडिया में पर्याप्त स्थान नहीं मिल रहा हैं। सरकारी दूरदर्शन में भी दलितों का कोई स्थान नहीं है। वैसे भी दलितों का उच्च शिक्षा के संदर्भ में न के बराबर महत्व है, तो मीडिया की बात क्या करे ?

निष्कर्षत कहा जा सकता है कि आज नहीं तो कल दलितों को मीडिया में स्थान देना ही होगा । आंदोलन, संघर्ष, जागृति, बलिदान की भावना के साथ दलितों को मीडिया के संदर्भ में आगे आना चाहिए ।

१.३ : दलित नारी और मीडिया

दलित पत्रकारिता में स्त्री संदर्भ काफी पुराने हैं। शायद उतने ही जितनी दलित पत्रकारिता। मराठी में स्त्री-विषयक प्रश्न फुले, अंबेडकर के समय कि दलित पत्रकारिता में आ चुके थे। स्वतंत्रताकालीन और बाद कि दलित 'दलित पत्रकारिता' पर इस प्रेरक पृष्ठभूमि कि छाप पड़ी है। महाराष्ट्र के पुणे शहर में 'फुले' कि पत्नी 'सावित्री बाई' ने 15 मई, 1848 में ही अछूत बस्ती में बल-बालिका विद्यालय खोल दिया था । ज्योतिबा फुले के मित्र 'उस्मान शेख' कि बहिन 'फातिमा शेख' ने इस कार्य में महत्वपूर्ण योगदान दिया। 1863 में फुले द्वारा स्थापित 'बाल हत्या प्रतिबंधक गृह' कि ज़िम्मेदारी 'सावित्री बाई' ने संभाली थी । आजादी के दौरान दलितों के राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक परिवर्तन के प्रयास विभिन्न आयामों पर शुरू हुए थे । जहां ज्योतिबा फुले इसके अग्रदूत थे वहीं भारतीय संविधान के जनक और दलितों के महानायक डॉ. भीमराव आंबेडकर ने दलित चेतना को एक नई दिशा दी । ब्राह्मणवादी संस्कृति को चुनौती देते हुए दलितों को मुख्यधारा में लाने का जो प्रयास हुआ, उससे दलित समाज में एक नई चेतना का संचार हुआ ।

आजादी से पहले एवं बाद में भी स्त्रियों ने पर्याप्त सामाजिक कार्य किए है वे आजादी से पहले एवं बाद में भी करती रही किन्तु वे अपनी नारी शक्ति का निर्माण नहीं कर पाई। संगठित नारी शक्ति या राजनीतिक शक्ति हो तो स्त्रियों के काम भी हो सकते है, लेकिन फिलहाल हमारे पास ऐसी कोई ताकत नहीं है । ताकत पैदा करने के लिए ठोस स्पष्ट कल्पना होनी चाहिए कि किस तरह के समाज की रचना करनी चाहिए। बड़ी दुखद स्थिति है कि आज राजनीतिक तख़्ता कुछ इस तरह जमाया गया है जिससे कि स्त्रियों की आवाज उसके चलते सुनाई नही देती वर्तमान भारतीय समाज व्यवस्था पुरुष प्रधान है इसमें कोई दो मत नहीं । सभी धर्मो के पारिवारिक कायदों

ने भी स्त्रियों के न्याय एवं समानता का अधिकार नकार दिया है। आज के आधुनिक युग में महिला सशक्तिकरण को लेकर जो समानता के आदर्श की बाते जोर-शोर से करने वाले लोग राजनीतिक दल, लोकसभा, विधानसभा, स्थानीय स्वराज संस्थाओ या ग्राम पंचायतों में स्त्रियों को जगह-जगह पर केवल पदाधिकार बनाया जा रहा है उनके फैसले के पीछे पुरुष का ही हाथ होता है आज भी मीडिया संस्थानो में फैसला लेने वाले पदों पर महिलाओ की संख्या कम ही है स्त्री को केवल उसके रंग से लिया जाता है।